समग्र हिन्दू धर्म-दर्शन-संस्कृति-सम्प्रदायों एवं राष्ट्र का प्रतिनिधि ग्रंथ गीता है

स्वामी संवित् सुबोधगिरि

गीता दिव्य आध्यात्मिक संगीत है जिसे साक्षात् पूर्ण ब्रह्म पुरुषोतम के अवतार भगवान् श्रीकृष्ण जी ने जीवन की कठोरतम परिस्थिति महासमर के समरांगण में अर्जुन को निमित्त बनाकर मानव मात्र के शोक-मोह-भय-अज्ञान का निवारण कर अपने-अपने स्वधर्म में अपने-अपने सहज-स्वाभाविक कर्तव्य पालन में स्थित करने हेतु गीत के माधुर्य के साथ गाया है। जिसे वेद व्यासजी ने श्लोकबद्ध किया है।

गीता से जुड़ते ही भारत की दर्शन परम्परा, विचार परम्परा, चिन्तन परम्परा, साहित्य परम्परा, काव्य परम्परा से हम जुड़ जाते हैं।

गीता से जुड़ते ही हम अपने भारत देश से, उसके भौगोलिक परिवेश यथा भारत देश के पर्वतों से, नदियों, जलवायु से, वनस्पति जगत्, जीव जन्तुओं से जुड़ जाते हैं, जिसका स्पष्ट प्रतिपादन विशेष कर दशम अध्याय के विभूतियोग में एवं एकादश अध्याय के विश्व रूप दर्शन योग में हुआ है।

गीता से जुड़ते ही भारतीय दर्शन की अवतार परम्परा से, देव विग्रहों से, ऋषियों, महर्षियों, राजर्षियों, ब्रह्मर्षियों, मुनियों से, स्वयं पूर्णब्रह्म पुरुषोतम से, परब्रह्म परात्पर के साक्षात् रूप लीला पुरुषोतम भगवान श्रीकृष्ण से जुड़ जाते हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व इतना अनन्तमुखी है कि यह कहना कठिन है कि वे क्या नहीं थे। योग-योगेश्वर, ज्ञानदाता, सिद्ध साधक, मित्र, सारथि, सेवक, रक्षक, राष्ट्रनिर्माता, आदर्श कर्मयोगी, आदर्श प्रेमी, आदर्श शासक, सफल राजनीतिज्ञ, शूरशिरोमणि, मानवता के गौरव, लोकनायक, लोकशिक्षक—वे सभी कुछ थे। पिछले 5000 वर्षों की गम्भीर गवेषणा के पश्चात् भी अभी तक उन के बहुरंगी जीवन की अनेकानेक अज्ञात दिशायें खोजनी शेष हैं।

एक पारसी विद्वान् प्रो. फिरोज कावसजी दावर भगवान् कृष्ण की महात्मा ईसा से तुलना करते हुए लिखते हैं—'...महात्मा ईसा इतिहास के उन बहुमूल्य रत्नों में से हैं जिनके लिए हम लोगों की सदा आदरसूचक विशेषणों का प्रयोग करने की इच्छा होती है, परन्तु क्या वे रणभूमि में जाकर युद्ध कर सकते थे या राजदूत का कार्य कर सकते थे?

हमारी यह धारणा है कि समस्त संसार के इतिहास में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं हुआ, जिसका कार्यक्षेत्र इतना अधिक व्यापक रहा हो, जितना श्रीकृष्ण का था। उन्होंने अपने कीर्तिमय जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में जो-जो लोकोत्तर कार्य किए, वे गत पांच सहस्र वर्षों से अटक से लेकर कटक तक और काश्मीर से कन्याकुमारी तक ही नहीं, प्रत्युत सारे जगत् के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में गाए जाते हैं।

वे विद्वान् पारसी प्रोफेसर आगे लिखते हैं—बालक, विद्यार्थी, मित्र, प्रेमी, योद्धा, शासक, राजदूत, तत्त्वदर्शी, योगेश्वर, सिद्धपुरुष तथा ईश्वर के पूर्णावतार आदि सारे ही रूपों में उनके जीवन की अद्वितीय महानता दृष्टिगोचर होती है। किसी कवि का कथन है कि कीर्तिमय जीवन की एक कार्यसंकुल घड़ी भी कीर्ति रहित जीवन के एक युग से भी श्रेष्ठ है, फिर श्रीकृष्ण ने तो एक सौ पचीस वर्ष की लम्बी एवं पूर्ण आयु प्राप्त की और उसके प्रत्येक घंटे में उन्होंने ऐसे-ऐसे कार्य किए जिनसे उनका नाम तथा यश, सदा के लिए अमर हो गया।

भगवान् कृष्ण ने प्राग्-ज्योतिषपुर (गुवाहाटी) को नरकासुर की पराधीनता से मुक्त कर, मगध के जरासंध को भीम द्वारा मरवा कर, भारत के हृदय देश में कंस एवं दुःशासन का मर्दन कर, सिन्धुराज जयद्रथ का अर्जुन द्वारा ग्रीवोच्छेदन करवा कर पश्चिम के कालयवन आदि विदेशी आक्रान्ताओं के संभाव्य आक्रमणों को निर्मूल करने के हेतु पश्चिमी समुद्रतट पर द्वारिका जैसी सुदृढ़ राजधानी बसा कर भारत के पूर्व से लेकर पश्चिम तक को स्वाधीन एवं भयमुक्त कर भारत को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में पिरो दिया। इसके पूर्व प्रभु श्रीराम ने उत्तर और दक्षिण भारत को जोड़ा था।

गीता से जुड़ते ही हम भारत के प्रशासकों की परम्परा से, भारत के राजा-महाराजा, सम्राटों की परम्परा से जुड़ जाते हैं जो कि 'ब्रह्म विद्या' में दीक्षित होते थे। गीता के चौथे अध्याय के प्रारम्भ में ही स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण बताते हैं मैंने सर्व प्रथम गीता के निष्काम कर्मयोग का उपदेश सूर्य को, सूर्य ने अपने पुत्र बैवस्वत मनु को, मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु से कहा। इस प्रकार परम्परा से प्राप्त इस योग को राजर्षियों ने जाना। फिर यही ज्ञान जो बीच के कालखण्ड में लुप्त-सा हो गया था पुनः सर्वश्रेष्ठ प्रशासक भगवान् श्रीकृष्ण दूसरे श्रेष्ठ प्रशासक अर्जुन को दिया।

ग्रीक दार्शनिक अरस्तु जिसे पश्चिम Father of all Sciences मानता है, अपने विचारों का जनक मानता है वह कहता है राजा को दार्शनिक होना चाहिए। भारत में आरम्भ से ही राजा-महाराजा-सम्राट् ब्रह्म विद्या में दीक्षित होते थे। ब्रह्म विद्या में दीक्षित व्यक्ति ही सबमें एकत्व का दर्शन कर, राग-द्वेष, पूर्वाग्रह से रहित होकर शोषण मुक्त, समतायुक्त, बंधुभाव सम्पन्न शासन दे सकता है। तभी राजा अश्वपति यह घोषणा कर पाये—मेरे जनपद में न कोई चोर है, न कृपण है, न मद्य पायी है, न कोई अग्निहोत्र रहित है, न कोई अनपढ़ है, न कोई व्यभिचारी है तो फिर व्यभिचारिणी का तो कहना ही क्या है?

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निर् नाविद्वान, न स्वैरी स्वैरिणी कृतः॥

कैकय देश के शासक अश्वपति के काल में कुछ ऋषि एकत्रित हुए ब्रह्म विद्या पर विचार विनियम के लिए। उनका परस्पर में समाधान नहीं होने पर अश्वपति के पास आए ब्रह्म विद्या के प्रकांड पंडित जानकर। राजा ने उन्हें यज्ञशाला में ठहराया। भोजन का समय होने पर भोजन के लिए बुलाया। तो उन्होंने भोजन ग्रहण करने से यह कहकर मना कर दिया कि राजा के यहां सत-असत् दोनों प्रकार की प्रजा से, और उचित-अनुचित दोनों विधि से कर आता है, धन आता है। अतः हम तपस्वियों के लिए यह ग्रहण योग्य नहीं। तब राजा ने उक्त प्रकार से घोषणा की, ऐसी कोई घोषणा भारत के अलावा किसी देश के राजा ने की हो इतिहास में अज्ञात है।

राजा राम के काल में सत के प्रभाव से त्रेता युग में सत युग की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। तुलसीदासजी मानस में कहते हैं—

देहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहि कहुहि व्यापा॥

राजा परीक्षित के प्रभाव से काल की गति स्थिर हो गयी थी। कलियुग उनके राज्य में प्रवेश नहीं कर पा रहा था। अतः जैसा राजा होता है उसका प्रभाव पूरे समाज और देश पर पड़ता है।

इसलिए भीष्म पितामह, युधिष्ठिर को शान्ति पर्व में उपदेश देते हुए कहते हैं—

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा कालकारणम्।
इति ते संशयी मा मूद राजा कालस्य कारणम्॥

(महाभारत शांति पर्व 69-79)

काल राजा का कारण है अथवा राजा काल का कारण है ऐसा संशय तुम्हें नहीं होना चाहिए। यह निश्चित है कि राजा ही काल का कारण होता है।

राजा कृत युग सृष्टा त्रेताया द्वापरस्य च।
युगस्थ न चतुर्थस्य राजा भवति कारणम्॥

(महाभारत शांति पर्व 69-98)

राजा ही सत्य युग की सृष्टि करने वाला होता है और राजा ही त्रेता, द्वापर, तथा चौथा कलियुग की सृष्टि का कारण होता है। स्पष्ट है राजा काल का कारण है। जैसा शासक होता है वैसा काल बन जाता है। कलियुग में कहीं विक्रमादित्य, राजा भोज, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी जैसे राजा हो तो कृतयुग बन जाता है। और कृतयुग में-सतयुग में वेन जैसा, हिरण्यकश्यपु जैसा राजा हो तो घोर कलियुग बन जाता है।

स्पष्ट है राजा अपने समय का निर्माता होता है। सर्वोच्च पद पर बैठा व्यक्ति सत है तो सारा समाज सतपथ का अनुगामी होता है। इसलिए कहा जाता है यथा राजा तथा

प्रजा। राजा में दोष है तो समाज में भी दोष होगा। गुरु में कमी हो तो वह शिष्य में भी आ जाती है। माता-पिता में दोष हो तो वह बच्चों में भी आ जाता है। अतः उच्च पदों पर, सर्वोच्च पदों पर बैठा व्यक्ति सत ही होना चाहिए। इसलिए हमारे यहां राजा ब्रह्म विद्या में, आत्म विद्या में दीक्षित, संस्कारित होते थे। फलतः सारा समाज सतपथ का अनुगामी होता था। जिससे सारे देश में सुख, शान्ति, अभय, समृद्धि, विकास और परस्पर में सहयोग-समन्वय का साम्राज्य था। सब कर्तव्यपरायण, सेवाभावी और त्यागी होते थे। इसलिए हम ज्ञान की दृष्टि से जगद् गुरु और वैभव की दृष्टि से सोने की चिड़िया थे। हां, यदि देश का राजा धृतराष्ट होगा जिसे वेदव्यासजी ने महाभारत रूपी युद्ध का विष वृक्ष माना है तो सत परायण वैभव सम्पन्न राज्य को कैसे पतन के गर्त में ढकेल देता है यह महाभारत की कथा से स्पष्ट है।

इस प्रकार हमारे शासक ब्रह्म विद्या में प्रतिष्ठित होते थे। देश में कोई भूखा, कोई बेकार नहीं था। लोगों के मन पाप नहीं। 'पर द्रव्य लोष्ठवत्, पर नारी मातृवत् और सर्वजन आत्मवत्' थे। यही कारण घरों में ताले नहीं लगते थे। अतिथि के पानी मांगने पर दूध, दही, छाछ से स्वागत होता था। यूनानी राजूदत मैगस्थनीज की पुस्तिका इंडिका और चीनी यात्री ह्वेनत्सांग का यात्रा विवरण इसका साक्षी है। प्रमाण है। 'प्राण जाए पर वचन न जाए' का निर्वाह होता था। लिखत-पढ़त नहीं मूंछ के बाल गिरवी रखे जाते थे। मजे की बात है पहले ब्रह्म विद्या राजाओं, क्षत्रियों के पास ही थी कालान्तर में क्षत्रिय राजाओं से ब्राह्मणों ने ब्रह्म विद्या प्राप्त की। राजा ब्रह्म विद्या में प्रतिष्ठित होने से राजा-प्रजा दोनों खुशहाल थे। अन्यथा मिश्रादि देशों के राजा एवं शासक वर्ग का तो बहुत शान-शौकतमय-भोग-विलासमय, ऐश्वर्यमय महलों का जीवन होता था। पर सामान्य जनता को झोपड़ी में गरीबी में सामान्य जीवन से संतोष करना पड़ता था।

स्वामी रंगनाथानन्दजी वर्षों तक विदेशों में भारतीय संस्कृति के दूत रहे। आगे चलकर रामकृष्ण मिशन के अध्यक्ष बने, सेनापति करिअप्पा से मिलने गये और उनकी टेबल पर गीता रखी देखकर पूछा क्या आप गीता पढ़ते हैं? उन्होंने थोड़ा मुरझाये हुए, अलसाये हुए कहा—हां जब कभी मानसिक थकान महसूस करता हूं तो थोड़ी मानसिक शांति पाने के लिए गीता की कुछ पंक्तियां पढ़ लेता हूं। तब स्वामीजी ने कहा मात्र इसके लिए तो गीता नहीं है। तब सेनापति करिअप्पा ने पूछा तो क्या प्रशासक के रूप में गीता का उपयोग है। तब स्वामीजी ने कहा—हां। व्यापक लोक कल्याण में लगे कर्मठ व्यक्तियों, प्रशासकों को एक क्रियात्मक दर्शन की आवश्यकता होती है। इसकी पूर्ति के लिए गीता है। और सेनापति करिअप्पा को गीता के प्रति वास्तविक दृष्टि मिली।

गीता से जुड़ते ही हम अपने पूर्वजों की गौरव गाथा, कीर्ति गाथा, अपने पराक्रमी पुरुषार्थी इतिहास के अक्षय स्रोत से जुड़ जाते हैं।

गीता से जुड़ते ही हम उसके शिक्षा दर्शन, संस्कार परम्परा एवं सभ्यता-संस्कृति से जुड़ जाते हैं।

भारत के प्रायः सभी धर्म-दर्शन-मत-सम्प्रदाय की तरह गीता भी शरीर, मन-बुद्धि के साथ-साथ आत्मा की सत्ता को स्वीकारती है जो उत्तरोत्तर बली, श्रेष्ठ एवं व्यापक है। शरीर-मन-बुद्धि के आधार में आत्मा है। इनके अनुरूप चार जीवन मूल्य याने चार पुरुषार्थों को स्वीकार करती है—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। अर्थ और काम धर्म के अनुकूल और धर्म के अविरुद्ध ही व्यक्ति और समाज दोनों के लिए कल्याणकारी और बन्धन के हेतु न बनकर मुक्ति के हेतु बन जाते हैं। जीवन काल में हम पूर्णता को आत्मसात कर सकें, आत्म-ब्रह्म एक्य की अनुभूति में स्थित हो सकें इसके लिए जीवन को चार आश्रमों में यथा—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास में विभक्त किया गया है। और समाज भी अपनी पूर्णता को प्राप्त हो, सभी को शिक्षा, रक्षा, भोजन, चिकित्सा और सेवा उपलब्ध हो सके इसके लिए गुण-कर्म के आधार पर चार वर्णों यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभक्त किया गया है।

भारत में उत्पन्न प्रायः सभी धर्म-दर्शन-मत-पंथ सम्प्रदाय की तरह गीता भी व्यक्ति जीवन, परिवार जीवन, समाज जीवन, राष्ट्र जीवन और विश्व जीवन के संचालन में धर्म की सत्ता सर्वोपरि स्वीकारती है। धर्म हमारे जीवन की मूल चेतना है, प्राण बिन्दु है, केन्द्रिय तंतु है जिसमें हमारा व्यक्ति जीवन, परिवार जीवन, समाज जीवन, राष्ट्र जीवन, विश्व जीवन याने पूरा चराचर गुंथा हुआ है। भारतीय परम्परा में धर्म हमेशा किसी न किसी का कर्तव्य बोध कराता है। भारतीय परम्परा में धर्म स्व के अनुरूप अपने-अपने कर्तव्य का बोध कराता है। अगर आप राजा हैं तो उसका अपना एक कर्तव्य है, प्रजा हैं तो उसका अपना एक कर्तव्य है, इसी प्रकार माता-पिता, पुत्र-पुत्री आदि सबका अपना-अपना कर्तव्य है। भारत में धर्म उन अर्थों में कभी भी प्रयुक्त नहीं हुआ जिन अर्थों में यूरोप में 'रिलीजन' और अरब जगत् में 'मजहब' प्रयुक्त होता रहा है। यही कारण है कि भारत की धर्म व्यवस्था को न इस्लामिक शासक समझ सके और न यूरोपीय शासक, न मेकालेवादी शिक्षाविद्, न मार्क्सवादी इतिहासकार और न ही स्वतंत्रता के बाद सत्ता संभालने वाले नेहरूवादी शासक वर्ग ही इसे सही परिप्रेक्ष्य में समझ सका। भारत में सर्वोच्च सता धर्म की रही है। शासन सत्ता पर सदा धर्म का अंकुश रहा है। सामान्यतः भारत छोड़कर सारे विश्व में शासक सर्वसत्ताधीश होता है। इसलिए शासक सर्वोपरि भी होता है। लेकिन भारत में धर्म को शासक का शासक माना गया है। राज्यारोहण के समय राजा सिंहासन पर बैठने से पहले कहता था—अदण्डयोस्मी। मैं जैसा चाहूं शासन करने को स्वतंत्र हूं। मुझे कोई दण्डित नहीं कर सकता। यानी मैं अदण्डय हूं। तब राज्य का पुरोहित या धर्मगुरु उसके मस्तक पर धर्मदण्ड से टकोर करता था। टकोर के साथ कहता था—'धर्मदण्डयोसि।' यानी तुम धर्म के अधीन हो। धर्म तुम्हें दण्डित कर सकता है। तुम्हें धर्म के नियमों के

अनुसार शासन करना है। अधर्माचरण करोगे तो धर्म तुम्हें दण्डित करेगा। यह प्रक्रिया तीन बार दोहरा कर उसे अनुभुति कराई जाती थी कि वह धर्म का अनुचर है। धर्म सर्वोपरि है। स्वयं भगवान् गीता में अवतार का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहते हैं जब-जब भारत में धर्म की हानि होती है, ग्लानि होती है तब-तब धर्म की पुनः स्थापना के लिए अवतार लेता हूं। गीता का प्रारम्भिक बिन्दु भी धर्म है—'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' और समापन भी 'ध्रुवा नीतिः' याने धर्म से होता है।

हिन्दू धर्म के लगभग सभी मत-सम्प्रदायों की तरह गीता के भी निम्नलिखित चार सामान्य दार्शनिक आधार हैं—

(क) आत्मा अमर है। (सच्चा मानव आत्मा ही है Soul is the Real Man within man)।

(ख) जीवन का अन्तिम लक्ष्य है अमरत्व अथवा मोक्ष।

(ग) जब तक मोक्ष प्राप्ति नहीं तब तक पुनर्जन्म।

(घ) कर्म सिद्धान्त—मनुष्य के किये हुए अच्छे-बुरे कर्मों का फल जन्म-जन्मान्तर तक उसके साथ जाता है।

इनमें से प्रथम दो सिद्धान्त शाश्वत हैं—

दो सिद्धान्त व्यावहारिक एवं अस्थायी हैं—पुनर्जन्म एवं कर्म सिद्धान्त।

जब तक मोक्ष का लक्ष्य प्राप्त नहीं होता तब तक बीच के पड़ाव की तरह दोनों सिद्धान्त कार्य करते हैं। जब मोक्ष प्राप्त हो जाता है तब पुनर्जन्म एवं कर्म सिद्धान्त दोनों के चक्र से मुक्ति मिल जाती है। मुक्ति ही है इन दोनों से छुटकारा।

आत्मा, स्वरूप से जो अमर ही है, जब अपने अमरत्व के जन्मसिद्ध अधिकार को पा लेता है तब उसी को मोक्ष कहा जाता है। अंत में अमर अमर में मिलकर एक अमरत्व का सिद्धान्त बचता है। भारतीय संस्कृति की तरह गीता भी उसी अमरत्व की साधना एवं अमरत्व की सिद्धि है।

भारतीय शास्त्र परम्परा के अनुसार आत्मा की दृष्टि से, ब्रह्म की दृष्टि से, ईश्वर की दृष्टि से, चेतन तत्त्व की दृष्टि से हम सब एक हैं क्योंकि हम सबमें एक ही आत्म तत्त्व का, ब्रह्म तत्त्व का, ईश्वर तत्त्व का, चेतन तत्त्व का वास है पर हम सबकी प्रकृति में भेद है। क्योंकि सृष्टि का फूल तीनों युगों की विषमता में ही खिलता है और विषमता पर्यन्त ही रहता है। अतः हम सब का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक विकास का स्तर भिन्न है। फलतः सबके स्वभाव में, रुचि में भिन्नता है। आत्मा की दृष्टि से, ब्रह्म की दृष्टि से, ईश्वर की दृष्टि से, चेतन की दृष्टि से सबका लक्ष्य एक है। मूल स्वरूप की प्राप्ति जो कि पूर्ण है, सत् स्वरूप है, चित्त स्वरूप, आनन्द स्वरूप है। पर स्थिति एवं रुचि भेद के कारण लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पंथ

अनेक हैं, मार्ग अनेक, उपासना पद्धति, पूजा पद्धति, देव विग्रह अनेक हैं (जो कि एक ही ईश्वर की अभिव्यक्ति है।) सभी मार्ग एक दूसरे के विरोध नहीं वरन् पूरक हैं, एक दूसरे पर अवलम्बित हैं, परस्पर में सामजस्य है, समन्वय है सहयोग है। इसका श्रेष्ठ उदाहरण गीता है। मानवीय चेतना के तीन पहलू हैं यथा ज्ञानात्मक, रागात्मक एवं संकल्पात्मक। इसके अनुरूप चार मार्ग बनते हैं कर्मयोग, राजयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग, कर्मयोग का सूत्र Act for perfect, meditated on the perfect, feel for the perfect, know the perfect. गीता समन्वय और सहकार का ग्रंथ है, यह प्रकृति-निवृत्ति के सामरस्य को लेकर चलती है।

भारतीय परम्परा किसी पर अपने विचार थोपती नहीं है। भारतीय परम्परा में गुरु शिष्य को शिक्षा, संस्कार, उपदेश देता है, पर निर्णय उसको स्वयं करना है, उस पर चलना स्वयं को है, इसके लिए उसके विवेक को जागृत करते हैं, कुंद नहीं। इसका श्रेष्ठ उदाहरण गीता है। अर्जुन जब अपने कर्तव्य के विषय में सम्पूर्ण रूप से संशय ग्रस्त हो जाता है, अपने कर्तव्य के विषय में तब भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति शरणागत होकर वर्तमान संदर्भ में एक निश्चित उपदेश देने की प्रार्थना करता है जो उसके लिए कल्याणकारी हो। फिर अर्जुन जितने भी प्रश्न करता है, उन सबके समाधान के लिए भगवान् उपदेश देते हैं। उपदेश दे देने के पश्चात् अर्जुन से पूछते हैं तेरा मोह-अज्ञान दूर हुआ या नहीं। मैंने सब दृष्टियों से तेरे प्रश्नों का उत्तर दे दिया है, अब जैसा समझ में आये वैसा कर 'यथोच्छसि तथा करू' 18/63 गीता। भगवान् भी उस पर अपने विचार थोपते नहीं हैं, उसकी बुद्धि को कुंद न करके जागृत करते हैं ताकि वह स्वयं वर्तमान परिस्थिति में योग्य निर्णय ले सके। तब अर्जुन भी कहता है मेरा मोह-अज्ञान दूर हो गया है और अब मैं अपने कर्तव्य पालन के लिए तत्पर हूं, प्रस्तुत हूं। और वह अपने युद्ध रूपी कर्तव्य का पालन कर संसार का सर्वश्रेष्ठ योद्धा सिद्ध होता है और विजय श्री लाभ करता है।

गीता साक्षात् परात्पर परब्रह्म की वाणी होने से एक देश विशेष से, एक काल विशेष से, एक जन या कुछ जन विशेष से सम्बन्धित न होकर सर्वदेश, सर्वकाल, सर्वजन से सम्बन्धित है। इस प्रकार गीता में देशीय तत्त्व, कालीय तत्त्व एवं कर्मकाण्डी तत्त्व न होने से अपने जन्मलग्न से यानी प्रारम्भ से ही न केवल भारतीय मनीषा वरन् सभी क्षेत्रों की विश्व मनीषा प्रभावित एवं प्रेरित है।

चाहे मिश्र को लेवें जिन्होंने अपनी सभ्यताओं को अमर जीवन प्रदान करने के लिए गगन चुम्बी पिरामिडों को जन्म दिया। अपने पूर्वजों को अमर जीवन प्रदान करने के लिए उनके शवों को 'मम्मी' बनाया जिन्हें मलमल के वस्त्र में लपेटा गया जो भारत से जाता था। सागवान की लकड़ी की पेटी में रखा जाता था, सागवान की लकड़ी भी भारत से जाती थी। पेटिका में गीता का श्लोक[1] इजिप्टियन भाषा में लिखा पाया गया है। चाहे यूनानी दार्शनिक पाइथोगरस, सुकरात, प्लेटो, अरस्तू को

लेवें। यूनानी दार्शनिकों में सर्वप्रथम पाइथोगोरस में आत्मा के अमरता, पुनर्जन्म, कर्म सिद्धान्त की चर्चा मिलती है उसके पूर्व नहीं। वह भारत की सांस्कृतिक यात्रा में आया था। पर इसमें विवाद है। पर ईरान की सांस्कृतिक यात्रा में आया। यह निर्विवाद है। और ईरान के सम्पर्क में आने का अर्थ भारत के सम्पर्क में ही आना है। उस समय वहां आर्य राजा कुरू का शासन था। सुकरात से भारतीय दार्शनिक की वार्त्ता विश्व प्रसिद्ध है। सुकरात ने कहा दर्शन मानव जीवन एवं उसकी समस्याओं के विषय में जिज्ञासा करता है। इस पर भारतीय दार्शनिक मुस्कराया और उत्तर दिया—कोई भी मानव जीवन और उसकी समस्याओं के विषय में तब तक नहीं जान सकता जब तक दैवीय तत्त्वों के बारे में जान न ले। इस भारतीय दृष्टि से सुकरात का पूरा दर्शन और जीवन प्रभावित रहा है। प्लेटो के Republic ग्रंथ में भारतीय विचारों का पुनर्कथन है। और अपने दर्शन में उपनिषदों के अनेक उद्धरण उसने दिये हैं। अरस्तू जिसे पश्चिम Father of all Sciences मानता है और अपने विचारों का जनक मानता है वह सिकन्दर से इच्छा प्रकट करता है भारत से एक संत और एक गीता की प्रति लावें, ताकि उसके चरणों में बैठकर गीता पढ़ सके। चाहे ईसाइयत को जन्म देने वाले स्वयं ईसा मसीह को लेवें। जो भारत में दो बार आते हैं प्रथम बार शिक्षा ग्रहण करने द्वितीय बार शरण पाने। बाइबिल पर गीता, वेदान्त और बौद्ध दर्शन की स्पष्ट छाप है। इसलाम को जन्म देने वाले मुहम्मद साहब के पूर्व के कवि हों या स्वयं मुहम्मद साहब द्वारा प्रतिपादित कुरान हो, हदीस हो। चाहे सूफी संत सरमद शहीद हो, उनका शिष्य दाराशिकोह हो जो औरंगजेब का बड़ा भ्राता था, चाहे औरंगजेब की पुत्री जैबुनिसा हो, चाहे फैजी हो या अलबरूनी जो मुहम्मद गजनवी के साथ भारत आया था, चाहे अन्तिम मुगल बादशाह जफर हो, जिन्ना हो, इकबाल हो चाहे टर्की के मुसलमान प्रधानमंत्री हो या भारत के सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश आरिफबेग हो या भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम हों, चाहे इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति सुकर्ण और वहाँ की मुस्लिम जनता हो चाहे आधुनिक काल के यूरोपीय लोग हों जो विलकिन्स के माध्यम से गीता से परिचित होते हैं 1776 में जिसकी भूमिका ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स लिखते हैं—ब्रिटिश साम्राज्य के ध्वस्त होने के बाद भी भारतीय संस्कृति के गायक सदैव पूजे जाते रहेंगे। जिससे भोगवाद से पीड़ित यूरोप को बड़ी शांति मिली। इसके दो वर्ष बाद डूपरो ने इसका अनुवाद लैटिन में किया जिसे देखकर जर्मन दार्शनिक श्लेगल स्तम्भित हो गया। और वह कहता है कि भारतीय दर्शन मध्याह्न सूर्य की प्रखर दीप्ति के साथ चमक रहा है जिसके सामने पश्चिमी दर्शन जो यूनान से प्रारम्भ होता है टिमटिमाते हुए दीपक के समान है जो कभी भी बुझ सकता है। मृत्युशय्या पर पड़े हुए मृत्यु के दिन गिनने वाले शोपेनहावर

---

1. न जायते म्रियते वा कदाचिन् नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
   अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥2/20॥

को गीता और उपनिषदों का लैटिन अनुवाद मिला तो वह चमत्कृत हो गया और उसे इतना आत्मबल मिला कि वह स्वस्थ हो गया और वह कहता है—जीवन और मृत्यु की सांत्वना है गीता और उपनिषद्। काण्ट गीता से इतना प्रभावित हुआ कि वह अपना विषय भूगोल और नक्षत्र विज्ञान छोड़कर दार्शनिक बन गया। दोनों का दर्शन गीता का कर्तव्यवाद एवं निष्काम कर्मयोग पर आधारित है। अमेरीकी दार्शनिक हेनरी थोरो जो बोस्टन शहर छोड़कर जंगल में वाल्डेन सरोवर के पास कुटिया बनाकर रहता था वह कहता है–गीता के अमृत जल से नित्य प्रातःकाल अपने दिल दिमाग को धोता हूं। वह कहता है—दुनिया ने बहुत स्मारक बनवाये जिसमें मिस्र के पिरामिड भी हैं—दुनिया के सारे स्मारक मिलकर भी गीता का मुकाबला नहीं कर सकते। वे गीता के सामने तुच्छ हैं। गीता दुनिया का सबसे महान् स्मारक—ज्ञान-स्मारक है। आज दुनिया ने शिक्षा के क्षेत्र में, विज्ञान के क्षेत्र में अनेक कीर्तिमान स्थापित किए वह सब गीता के सामने तुच्छ हैं। उनका शिष्य इमर्सन अपने गुरु थोरो के पास गीता पढ़ने बोस्टन से 25 किलोमीटर दूर प्रातःकाल नित्य जाता था। भू-लोक में थोरो मात्र 32-33 साल रहा फिर उसने अपने गुरु की पावन स्मृति लेकर यूरोप में गीता प्रचार प्रारम्भ किया। एक बार वह इंग्लैण्ड के दार्शनिक कार्लाइल से मिलने गया। दोनों की भेंट होने पर एक-दूसरे को गीता भेंट करते हैं। जिसका प्रभाव डॉ. राधाकृष्णन् और भाई परमानन्द पर पड़ता है। अमेरीका का पत्रकार क्रिस्टोफर ईशरवुड की बाइबिल से अनास्था हो गई जब उसे बताया गया God सातवें आसमान में रहता है। उसका न्यायालय अभी बन्द है जो कयामत पर खुलेगा जो दस हजार वर्ष के 10 हजार युग बीतने पर यानी एक अरब वर्ष बाद आयेगा—ऐसे ईश्वर के प्रति अनास्था हो गयी। वह कहता है इससे तो मानवीय मजिस्ट्रेट अच्छा है जो कुछ दिन, माह या वर्ष में न्याय दे देता है। और वह अपनी प्राण रक्षा और अपनी आस्था की रक्षा गीता के आधार पर कर सका।

रूस का स्टालिन भारतीय दर्शन से प्रभावित हुआ। डॉ. राधाकृष्णन् जब रूस के दौरे पर थे उनको बुलाकर गीता का ज्ञान सुना करता था। टाल्सटाय ने गीता को रूस में विशेष प्रसिद्ध किया।

अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवियों वर्ड्सवर्थ, शैली, कीट्स, बायरन और वाल्टर स्काट जैसे प्रमुख कवि गीता से प्रभावित हैं। उनकी कविताओं के बहुत से अंश अत्यन्त दुर्बोध और मन-बुद्धि की समझ से परे हैं। क्योंकि उनकी परम्परा में यानी यूरोपीय दर्शन, बाइबिल आदि में इसका कोई उत्तर नहीं है, समाधान नहीं है। उन्हें गीता के प्रकाश में ही सहजता से समझा जा सकता है। अन्यथा समझना अत्यन्त कठिन है।

लन्दन म्यूजियम में दुनिया का सबसे बड़ा पुस्तकालय है जहां मुख्यद्वार पर एक Show-Case में गीता की पुस्तक सजी है।

जापान के शिन्तो धर्म पर, चीन के कन्फ्यूशियस धर्म, ताओ धर्म पर गीता का प्रभाव है।

अमेरीका के आणविक वैज्ञानिक ओपेनहाइमर ने गीता का श्लोक पाठ करके लब्ध आणविक गवेषणा की घोषणा की। नोबेल पुरस्कार प्राप्त जीव विज्ञानी आल्डुअस हक्सले ने गीता का अनुवाद किया और उसने गीता को सच्चे अर्थ में शाश्वत दर्शन की संज्ञा दी है। स्वदेशी गणितज्ञ नारलीकर ने गीता कंठस्थ की। प्रसिद्ध वैज्ञानिक हुम्बोल्ट, जीव वैज्ञानिक वर्गसा, ब्रिटिश वैज्ञानिक डॉ. जॉन बर्डन सेंटरसन हाल्डेन ने गीता को अपनाया। आइंस्टाइन को बाइबिल से अनास्था हो गई थी। उसे पूरी तरह बचकानी मानते थे पर वे गीता से पूरी तौर पर प्रभावित थे। भूतपूर्व राष्ट्रपति स्व. अबुल कलाम गीता का अध्ययन कर अपना समाधान प्राप्त करते थे। सुनीता विलियम्स जब अन्तरिक्ष में वैज्ञानिक शोध के लिए 155 दिन की यात्रा पर थी तो अपने साथ गीता ले गयी थी। उससे उन्हें बल मिलता रहा। पश्चिम के विद्वान् स्वयं गीता से प्रभावित होकर स्वयं संस्कृत भाषा को सीखकर गीता का अनुवाद अपने-अपने देश की भाषाओं में कर अपने पैसों से प्रकाशित कर अपने-अपने देशों में प्रचारित कर रहे हैं। जबकि बाइबिल वे स्वयं हमारी देशी भाषाओं में अनुवाद कर निःशुल्क वितरित करते हैं। और उसको पढ़ने के लिए कई प्रलोभन देते हैं।

गीता पूर्ण परब्रह्म परमात्मा की वाणी होने से पूर्ण दर्शन है। हम जानते हैं पूर्ण से पूर्ण की निष्पति होती है और पूर्ण ही शेष रहता है। इसलिए इशोपनिषद् के शांति मंत्र में नित्य गाते हैं—

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्ण-मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवा-वशिष्यते॥

ॐ शांतिः शांतिः शान्तिः

अतः गीता भगवान् की साक्षात् वाणी होने से पूर्ण दर्शन है। गीता की तुलना हीरे से की जाती है। हीरे से प्रकाश पाने के लिए तराशना पड़ता है। जितने कोनों से तराशेंगे वहां-वहां से प्रकाश मिलेगा। वैसे ही गीता को कर्मयोग, राजयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, आत्म समर्पण योग, समाज दर्शन, शिक्षा दर्शन, सृष्टि विज्ञान जिस दृष्टि से देखेंगे उसका पूर्ण प्रकाश मिलेगा। अध्यात्म की दृष्टि से देखेंगे तो उस पर पूर्ण प्रकाश मिलेगा। मनोविज्ञान की दृष्टि से देखेंगे तो उस पर पूर्ण प्रकाश मिलेगा। अवतार विग्रह की दृष्टि से देखेंगे तो भगवान् श्रीकृष्ण पूर्ण ब्रह्म का अवतार है। लीला पुरुषोत्तम है और आज सनातन हिन्दू धर्म अन्तर-बाह्य देशी-विदेशी शत्रुओं से घिर गया उससे उबारने की क्षमता एकमात्र भगवान् श्रीकृष्ण और गीता दर्शन में है। इसलिए पश्चिम के लेखकों ने भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी राह पर चलने वाले शिवाजी की युद्ध नीति की बड़ी कटु आलोचना की है जब इमर्सन ने पहली बार गीता पढ़ी—अर्जुन युद्ध से विरत

होना चाहता है और भगवान् श्रीकृष्ण युद्ध के लिए प्रेरित कर रहे हैं, तो वह घबरा गया गीता बन्द कर दी गीता ऐसा मोड़ लेगी इसकी कल्पना भी उसे नहीं थी। पर जब भारत की युद्ध के प्रति दृष्टि जानी तब यूरोप में, पश्चिम में गीता के सबसे बड़े प्रचारक सिद्ध हुए। पश्चिम में दो प्रकार के विचारक हैं—एक जिन्हें सारे विश्व की हित चिन्ता है। दूसरे जो सभी देशों का शोषण करके स्वयं सुखी रहना चाहते हैं उन्होंने आलोचना की है। जब सन्धि के सभी द्वार बन्द हो गए, साम, दाम, दण्ड, भेद चारों नीति असफल हो गयी। सत्य, धर्म, न्याय, स्वराज्य की कीमत पर भगवान् कृष्ण ने युद्ध को अस्वीकारा नहीं। स्वयं भगवान् के अवतार काल में धर्म-न्याय की प्रतिष्ठा नहीं होगी। तब जन सामान्य में भगवान्, धर्म और न्याय व्यवस्था पर अनास्था हो जायेगी कि भगवान् के साथ रहने पर भी पाण्डवों को न्याय नहीं मिल सका। तब हम किस खेत की मूली हैं। और तब सब असत् पथ के अनुगामी होकर असमय में नाश को प्राप्त होंगे। असमय में सृष्टि नाश को प्राप्त हो यह भगवान् को मंजूर नहीं। भगवान् 16वें अध्याय में कहते हैं दो प्रकार की सृष्टि है—दैवी और आसुरी। दैवी प्रकृति के लोगों पर प्रेम और विवेक का शासन कारगर होता है, आसुरी प्रकृति के लोग तो दण्ड की भाषा ही समझते हैं। संजय ने बार-बार धृतराष्ट्र को सावधान किया था आपकी लड़ाई दर-दर भटकने वाले पाण्डवों से नहीं है। साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण से है, और उस पर आप किसी भी प्रकार से विजय नहीं प्राप्त कर सकते। भगवान् ने भी कई बार घोषणा की, पाण्डवों का पक्ष धर्म और न्याय का है, अतः जो पाण्डवों के मित्र हैं वे मेरे मित्र हैं और जो पाण्डवों के शत्रु हैं वह मेरे शत्रु हैं। पर **विनाश काले विपरीत बुद्धि** के अनुसार बेसुध धृतराष्ट्र को अन्त तक चेत नहीं हुआ। भगवान् श्रीकृष्ण और शिवाजी की नीति पर देश चलने से भारत देश में पश्चिम की दाल नहीं गल सकती है। भारत ने तो अपने सत्व की, अपने अस्तित्व, आदर्श, स्वराज्य, धर्म की रक्षा के लिए युद्ध को अन्तिम हथियार मानकर, एक आवश्यक बुराई मानकर युद्ध को स्वीकारा। जबकि भारत छोड़कर प्रायः सारे विश्व ने दूसरों के अस्तित्व, आदर्श, सत्व, स्वराज्य, धर्म का अपहरण कर अपना उपनिवेश, अपना-अपना बाजार एवं गुलाम बनाने के लिए अपनी विदेशी, बर्बर पैशाचिक सभ्यता संस्कृति को थोपने के लिए हर प्रकार के कपटाचार, मिथ्याचार एवं युद्ध थोपा है वे भगवान् श्रीकृष्ण, प्रभु श्रीराम, शिवाजी पर आरोप लगाते हैं। जिन्होंने सत्व की रक्षा के लिए आवश्यक बुराई के रूप में, अन्तिम हथियार के रूप में युद्ध को स्वीकारा। पश्चिम चाहता है हम भ्रम के शिकार होकर आतताइयों से अपनी रक्षा भी न करें। हम उनके उपनिवेश, बाजार बने रहें। पश्चिम ने सारी दुनिया पर युद्ध थोपा पर भारत ने सबको अपना आत्मीय जानकर धर्म और दर्शन, सभ्यता-संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशल का दान दिया। और उस पर भी पश्चिम भारत पर ही युद्ध-हिंसा का आरोप लगा रहा है कितनी असत् बात है। हां हमने किसी पर युद्ध नहीं थोपा। पर किसी ने हमें छेड़ा तो उसे नहीं छोड़ा चाहे परदेशी रावण हो या स्वदेशी दुर्योधन या देव

पुत्र जयन्त, चाहे असुर हो उनसे व्यापक लोक कल्याण के लिए समुद्र मंथन में सहयोग तो लिया पर पोषण नहीं दिया। छल से अमृत पान करने पर शिरच्छेद कर दिया।

भारत में ईश भक्ति और देश भक्ति, देव भक्ति और राष्ट्र भक्ति की एक अखण्ड अविचल परम्परा रही वेद काल से लेकर आज तक स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, ऋषि अरविन्द, ऋषि बंकिमचन्द्र के साहित्य में गुंजयमान है। गीता इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। अर्जुन जब धर्माभास, ज्ञानाभास का शिकार होकर देश और धर्म को आतताइयों को सौंपकर अपने कर्तव्य कर्म से विमुख हो रहा था तब भगवान् ने गीतोपदेश द्वारा पुनः कर्तव्योन्मुख किया। हमारे धर्म ग्रंथ हमारे आध्यात्मिक ग्रंथ आपको देश की दृष्टि से राजनीतिक बेहोशी के लिए, आपको सुलाने, देश-धर्म, संस्कृति को पिटवाने-मिटवाने के लिए नहीं हैं। वरन् अपने देश-धर्म की रक्षा, पोषण एवं संवर्द्धन के लिए हैं। गीता को अपनाने वाला व्यक्ति और राष्ट्र कभी पतित, कर्तव्यच्युत, धर्मच्युत और गुलाम नहीं हो सकता। स्पष्ट है गीता की उत्पत्ति राष्ट्र की रक्षा, सनातन धर्म की रक्षा के लिए हुई है। ताकि हम अपना लौकिक अभ्युदय और पारमार्थिक निःश्रेयस एवं राष्ट्र का भी अभ्युदय सिद्ध कर सकें।

यही कारण है कि गीता द्वारा राष्ट्रीय जागरण राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम में गीता का अविस्मरणीय योगदान है। आत्मा की अमरता, निष्काम कर्मयोग, आत्म समर्पण योग, स्थितप्रज्ञ दर्शन, विवेकानन्द द्वारा उपदिष्ट वेदान्त दर्शन, विवेकानन्द साहित्य उसमें विशेष कर कोलम्बो से अल्मोड़ा व्याख्यानमाला तथा बंकिम चंद्र के वंदेमातरम् गीत जिसमें गीता के निष्काम कर्मयोग के भाव को गीत के रूप में गाया गया है, ने भारत के स्वाधीनता आन्दोलन में अभूत पूर्व अवदान दिया चाहे वे सशस्त्र विद्रोह के पथ से चलने वाले क्रान्तिकारी हों, चाहे अहिंसा के पथ से चलने वाले शान्तिकामी हों, दोनों का लक्ष्य भारत की स्वाधीनता था अतः दोनों का पाथेय भी एक था—भगवद्गीता। इसलिए गांधी, विनोबा के हाथ में गीता, लोकमान्य तिलक, अरविन्द घोष, मदनमोहन मालवीय, खुदीराम बोस, विनय, बादल, दीनेश, रामप्रसाद, विस्मिल, भगतसिंह, उधमसिंह, सुभाष चन्द्र बोस, वीर सावरकर के हाथ में भी गीता।

राष्ट्रीय ही नहीं अन्तराष्ट्रीय मुक्ति संग्राम भी गीता का अवदान है विशेषकर जर्मनी, जापान, इंडोनेशिया, चेकोस्लोवाकिया, वियतनाम आदि देशों पर।

अन्तराष्ट्रीय मुक्ति संग्राम ही नहीं अन्तराष्ट्रीय मैत्री भाव व विश्व शान्ति को भी गीता ने सम्बल प्रदान किया है।

विश्व शान्ति एवं विश्व कल्याण की दृष्टि से संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.) की प्रतिष्ठा, उसके उद्देश्य को लेकर प्राक्तन सेक्रेटरी जनरल स्वर्गत दयास हयामार शिल्ड बोलते हैं—फलाकांक्षा करके कर्म करने की अपेक्षा फलाशा त्यागकर कर्म करना बहुत अच्छा है। यह उपदेश सभी युग में सभी दर्शन की चुड़ान्त कथा है। राष्ट्र

संघ की प्रबल चेष्टा से हम लोग यदि गीता का उपदेश अनुसरण कर चल सके तभी हम लोग सुखी हो सकेंगे।

सम्भवतः 1988-89 में U.N.O. में गीता की महत्ता को स्वीकार करते हुए गीता को विश्व के प्रचलित सभी धर्मशास्त्रों में श्रेष्ठ, ज्यादा वैज्ञानिक तथ्यों और सत्य पर आधारित और विश्व धरोहर ग्रंथ माना था। माननीय नरेन्द्र मोदीजी जब से प्रधानमंत्री बने विश्व के सभी राष्ट्राध्यक्षों को एवं अन्य प्रतिनिधियों को उपहार में गीता यह कह कर दे रहे हैं कि भारत के पास आपको देने के लिए इससे बड़ा कोई उपहार नहीं है और आपके पास भारत से लेने के लिए इससे बड़ा कोई उपहार नहीं है। गीता को विश्व के 140 विश्वविद्यालय अपने पाठ्यक्रम में शामिल कर उस पर शोध कार्य कर रहे हैं। महात्मा गांधी भी चाहते थे कि गीता न केवल राष्ट्रीय शालाओं में वरन् सभी शिक्षण संस्थाओं में सभी विद्यार्थियों को पढ़ायी जाए।

सुप्रीम कोर्ट के मुस्लिम मुख्य न्यायाधीश महामहिम आरिफ बेग साहब ने गीता का अध्ययन कर अपने विचार तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को एक विशेष नोट लिख प्रेषित कर राय दी थी कि यह एक अनमोल पुस्तक है जो सभी मजहब तो क्या मानव मात्र के पढ़ने की जरूरी किताब है। इसका अध्ययन शिक्षण संस्थाओं में प्रारम्भ से लेकर कालेज तक अनिवार्य होना चाहिए। हकीकत तो यह है कि एक श्रीमद् भगवद्गीता भारत की सही पहचान है।

गीता न केवल आध्यात्मिक, दार्शनिक, धार्मिक, नैतिक जगत् में वरन् जीवन के हर व्यवहारिक क्षेत्र में चाहे वह आश्रम जीवन हो, समाज जीवन हो, राजनैतिक जगत् हो, प्रशासनिक जगत् हो, व्यवसायिक जगत् हो, ओद्योगिक जगत् हो, प्रबंधकीय जगत् हो, चिकित्सा जगत् हो, अपराध शमन जगत् हो, खेल जगत् हो, मनोवैज्ञानिक जगत् हो, वैज्ञानिक जगत् हो, पर्यावरणीय जगत् हो, युद्ध क्षेत्र हो, शिक्षा जगत् हो सभी क्षेत्रों में गीता का सफल प्रयोग हो रहा है। इन सब क्षेत्रों की सफलता में गीता का विशिष्ट अवदान है—भारत के साथ-साथ विश्व भर में। इस प्रकार गीता केवल धार्मिक ग्रंथ ही नहीं वरन् चारों पुरुषार्थों की सिद्धि का ग्रंथ है।

आज जाने-अनजाने में भारत सहित सारा विश्व जिन समस्याओं से घिर गया है—यथा आर्थिक दासता, अति कामुकता, पशुता, नग्नता, अश्लीलता, बलात्कार, दुराचार, पापाचार, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, परिवारवाद, अपराधिक वृत्तियां, अनास्था, चारित्र्यहीनता, अनुशासनहीनता, आंतकवाद, धर्मान्तरण, लव जिहाद, भू जिहाद आदि सभी का सम्यक् उपचार गीता के पास है। तभी अमेरीका का प्रसिद्ध दार्शनिक इमर्सन कहता है—जीव, जगत्, धर्म एवं ईश्वर की कोई ऐसी समस्या नहीं है जिसका समाधान गीता के पास न हो। नर के अवतार अर्जुन ने मानव में जितने प्रश्न हो सकते हैं उठाया है और नारायण के अवतार भगवान् श्रीकृष्ण ने सबके यथोचित उत्तर दिए हैं। अतः स्पष्ट है इस युग की हर समस्या का समाधान गीता देती

है। जो शास्त्र वर्तमान जीवन को स्पन्दित नहीं करता प्रेरित नहीं करता, वर्तमान जीवन की समस्याओं का समाधान नहीं दे सकता, वह दीर्घजीवी, शाश्वत, आधुनिक एवं वर्तमान का शास्त्र नहीं हो सकता। गीता हर युग की समस्या का समाधान देती है अतः चिरंजीवी बनी हुई है। अतः वह चिर प्राचीन होते हुए नित्य नवीन है। शाश्वत है, आधुनिक है वर्तमान जीवन में उपयोगी है, प्रासंगिक है और आने वाले हर युग में उपयोगी बने रहने वाली है, इसलिए गीता हर युग की मांग रही है। और भविष्य में भी रहेगी।

गीता और भारतीय दर्शन परम्परा स्पष्ट कहती है कि जब भगवान् में 'एकोऽहम् बहुश्याम' का संकल्प उठता है तब अपनी सर्जना शक्ति (पत्नी) द्वारा जीव और जगत् को प्रकट करते हैं। जीव-जगत् एवं जड़-चेतन में एक ही चेतन तत्त्व या आत्म तत्त्व या ईश्वर तत्त्व या ब्रह्म तत्त्व समाया हुआ है। अतः दोनों एक-दूसरे के पूरक, एक-दूसरे पर अवलंबित, एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। अतः जड़ चेतन के किसी भी एक अंग पर आघात सभी पर आघात सिद्ध होता है क्योंकि सारा अस्तित्व परस्पर एक और अभिन्न है। फिर भगवान् की सर्जना शक्ति (पत्नी)[1] अर्थात् हमारी माता है। मां भोग्या नहीं है, मां से पालना पाने के अधिकारी है उनकी सेवा करके। इसलिए हमें जन्म से पांच ऋण प्राप्त है यथा-देवऋण, ऋषि ऋण, पितृ ऋण मनुष्य ऋण तथा भूत ऋण है और इसका विमोचन पंच महायज्ञ द्वारा जो इस प्रकार है–देव यज्ञ, ऋषि यज्ञ पितृ यज्ञ, मनुष्य यज्ञ तथा भूत यज्ञ द्वारा करते हैं।

अष्टधा प्रकृति (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि, अहंकार) को शुद्ध एवं लेन देन द्वारा संतुलित रखते हुए, उसका संवर्द्धन करते हुए अपनाया था।

हमारा व्यक्ति जीवन, खान-पान, पहनावा, रहन-सहन आहार-विहार, शुद्धाचार, परिवार जीवन व्यवस्था, आश्रम जीवन व्यवस्था, समाज जीवन व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, (प्रकृति के तीन गुणों पर आधारित) जाति व्यवस्था, ग्राम पंचायत, शिक्षा के लिए गुरुकुल प्रणाली, आर्थिक विकास के लिए—कृषि, गो पालन, वाणिज्य, सिंचाई, जल संरक्षण, उद्योग, शिल्प, कला-कौशल, रंग-रोगन, कारीगरी, भवन निर्माण, वस्तुशास्त्र, चिकित्सा, उत्सव यज्ञ-हवन और विकास के जो-जो मापदण्ड स्वीकारे थे वे सब अहिंसा पर आधारित प्रकृति के अनुकूल, प्रकृति के अविरुद्ध, प्रकृति को प्रसन्न एवं स्वस्थ रखते हुए, प्रकृति के साथ सुसंगत होकर आदर, कृतज्ञता और एकात्मता के भाव से अपनाया था।

हमने अपनी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति और विकास की यात्रा गीता के तीसरे अध्याय के श्लोक 10 से 16 में प्रतिपादित यज्ञ चक्र को स्वीकार कर की थी।

---

1. मम योनिर्-महद्-ब्रह्म, तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्।
   सम्भवः सर्व-भूतानां, ततो भवति भारत॥ गीता 14/3॥

यज्ञ की प्रक्रिया का पालने करते हुए, प्रकृति के प्रति पूज्य एवं वरेण्य भाव रखते हुए प्रकृति से पोषण, पालना, समृद्धि एवं सात्त्विक वैभव प्राप्त करते थे। फलतः ज्ञान की दृष्टि से जगद् गुरु तो वैभव की दृष्टि से सोने की चिड़िया थे। भारत के वैभव से प्रभावित होकर विश्व से सारे आक्रान्ता आये।

अतः भारत के लाखों वर्षों के इतिहास में कभी पर्यावरण की समस्या खड़ी नहीं हुई। पर यूरोप के 300 वर्षों के विकास में प्रकृति के प्रति गलत दृष्टि (भोग दृष्टि, शत्रु दृष्टि) के कारण अष्टधा प्रकृति के प्रदूषण से पर्यावरण की समस्या खड़ी हो गयी। जिससे गीता के तीसरे अध्याय के 10 से 16 श्लोक में प्रतिपादित यज्ञ चक्र को स्वीकार करके ही मुक्ति पायी जा सकती है।

मानव जाति के जितने वर्ग हो सकते हैं सभी के लिए गीता में पाथेय है। यानी राजा से रंक, बाल से वृद्ध, स्त्री-पुरुष, छात्र-शिक्षक , मजदूर-मालिक, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थी, संन्यासी-राजनेता आदि सभी के लिए गीता में पाथेय है, मानव के सम्पूर्ण सम्यक् विकास के, उसके चरमोत्कर्ष के लिए जितने सूत्र चाहिए वे सब गीता में एक साथ उपलब्ध हैं।

गीता के समय भारत एक राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित था क्योंकि गीता में जिस विचार परम्परा, दर्शन परम्परा, भौगोलिक परिवेश, जिन देव-विग्रह, अवतार परम्परा, ऋषियों, मुनियों, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, राजा, महाराजा, सम्राटों का, प्रशासकों की परम्परा का एवं जिस संस्कृति का वर्णन है, वह सब भारत से सम्बन्धित है। और अर्जुन को भगवान् श्रीकृष्ण कई बार 'भारत' शब्द से सम्बोधित करते हैं, 'आर्य' शब्द से सम्बोधित करते हैं। पूरे भारतीय वाङ्मय में आर्य शब्द जातिवाचक न होकर गुणवाचक, संस्कृति वाचक है, श्रेष्ठता का परिचायक है। अतः स्पष्ट है कि गीता के समय भारत एक राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित था। हमारा राष्ट्र जीवन सृष्टि के प्रारम्भ से ही है। जब भगवान् में **एकोऽहम बहुश्याम** का संकल्प होता है तभी सृष्टि के आदि में भगवान् सर्वप्रथम सूर्य को उपदेश देते हैं। गीता से अंग्रेजों का दुष्प्रचार भी खण्डित होता है कि अंग्रेजों के पूर्व भारत कभी एक राष्ट्र नहीं रहा है। एवं अंग्रेजों की कृपा से भारत एक राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में है।

इन सब आधारों पर ही इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 10 सितम्बर 2007 को दिये गए एक महत्त्वपूर्ण निर्णय में केन्द्र सरकार से कहा है कि वह संविधान के अनुच्छेद 51(क) के अन्तर्गत भगवद्गीता को राष्ट्रीय धर्मशास्त्र घोषित करे। संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय पक्षी, राष्ट्रीय पशु तथा राष्ट्रीय गीत की भांति राष्ट्रीय धर्म ग्रंथ भी घोषित किया जाना चाहिए। क्योंकि देश की स्वतंत्रता के आन्दोलन में प्रेरणास्रोत रही भगवद्गीता भारतीय जीवन पद्धति है। भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य बनता है कि वह इस राष्ट्रीय धरोहर की रक्षा करे और इसके आदर्शों का अनुसरण करे।

यह महत्त्वपूर्ण फैसला देते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने कहा है कि नैतिक और सामाजिक मूल्यों की संवाहक तथा हिन्दू धर्म के प्रत्येक सम्प्रदाय की प्रतिनिधि गीता भारत का धर्मशास्त्र है। संविधान के मूल कर्तव्यों के तहत राज्य का दायित्व है कि वह 'भगवद्‌गीता' को राष्ट्रीय धर्मशास्त्र की मान्यता दे। भारत का प्रत्येक विद्वान् जानता है कि 'धर्म और रिलिजन' अलग-अलग है। धर्म का पर्याय रिलिजन या मजहब नहीं। धर्म सारे मानव समुदाय का एक है, पर रिलिजन या मजहब अनेक होते हैं। न्यायालय ने यह भी महत्त्वपूर्ण बात कही कि इस देश में ईसाई, पारसी, मुस्लिम या यहूदी नहीं है वे सब हिन्दू है। भारत में जन्मे सभी सम्प्रदाय—बौद्ध, जैन, सिख हिन्दुत्व का हिस्सा है और संविधान के अनुच्छेद 25 व 26 के अन्तर्गत हिन्दुओं को भी अपने सम्प्रदाय के संरक्षण का अधिकार प्राप्त है।

केन्द्र सरकार को भी न्यायालय ने ध्यान दिलाया है कि गीता भारत की आत्मा है। गीता सभी सम्प्रदायों की मार्गदर्शक शक्ति है। गीता सनातन सत्य को उजागर करती है। इसलिए वह किसी सम्प्रदाय विशेष का ग्रंथ न होकर पूरी मानवता का सद् ग्रंथ है, पूरे मानव समाज को एक सूत्र में बांधने वाला ग्रंथ है और पूरे मानव समाज को अपने-अपने कर्तव्यों का बोध कराने वाला ग्रंथ है।

भारतीय परम्परा का उद्‌घोष है जहां सत्य है और उसका क्रियान्वन है, जहां ब्रह्म तेज और क्षात्र तेज का समन्वय है, शील और शक्ति का समन्वय है, आदर्श और यथार्थ का (व्यवहार का), ज्ञान और कर्म का, बुद्धि और बल का समन्वय है वहीं विजय है, धर्म है, नीति है, समृद्धि है वैभव है एवं श्री (मोक्ष) है। इसका भी श्रेष्ठ उदाहरण गीता है। गीता का समाहार, समापन ही इसी उदघोष के साथ होता है—जहां योगेश्वर श्रीकृष्ण है और जहां धनुर्धारी पार्थ है वहीं पर श्री (मोक्ष पुरुषार्थ) विजय (काम पुरुषार्थ)) विभूति (अर्थ पुरुषार्थ) और अचल नीति (धर्म पुरुषार्थ) है यानी लौकिक अभ्युदय और पारमार्थिक निःश्रेयस दोनों की सिद्धि है, लौकिक अभ्युदय में धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ आते हैं और पारमार्थिक निःश्रेयस में मोक्ष पुरुषार्थ आता है। ऐसा संजय का स्पष्ट मन्तव्य है।

यत्र योगेश्वरः कृष्णो, यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्री-विजयोभूतिर, ध्रुवा नीतिर् मतिर्-मम॥

इन सब दृष्टियों से समग्र हिन्दू राष्ट्र का, समग्र हिन्दुत्व का, हिन्दू धर्म-दर्शन-संस्कृति एवं हिन्दू धर्म में उत्पन्न प्रायः सभी मतों-पंथों-सम्प्रदायों का प्रतिनिधि ग्रंथ कोई हो सकता है तो वह निर्विवाद रूप से गीता ही है जिसे हमारा न्यायालय भी मान्य करता है।